तमिलनाडु में जैन धर्म एवं तमिल भाषा के विकास में जैनाचार्यों का योगदान

—पं० सिंहचन्द्र जैन शास्त्री

श्रमण संस्कृति अति प्राचीन है। अनादिकाल से अनन्तानन्त तीर्थंकरों ने इस संस्कृति को अक्षुण्ण रूप से प्रवहमान रखा है। प्रत्येक तीर्थंकर के समय में श्रावक, श्राविका, मुनि, आर्यका के संघ विद्यमान थे। वर्तमान में तीर्थंकर न होने पर भी चतुर्विध संघ का अस्तित्व अवश्य है, और पंचमकाल के अंतिम समय तक अवश्य रहेगा ही। भारत देश ऋषिमुनियों का देश है। यह धर्म-प्रधान भूमि है। देवता भी इस पृथ्वी पर जन्म लेने के लिए तरसते हैं, ऐसा भागवत में लिखा है। यहां योग, भोग, त्याग भी हैं, मात्र भौतिक सामग्री की प्रधानता नहीं है। इस अवनितल में सत्पुरुष, धर्म संस्थापक, वैज्ञानिक, दार्शनिकों ने जन्म लिये हैं; साधु-सन्तगण, वैराग्य, ध्यान, साधना, इन्द्रियनिग्रह आदि में निमग्न होकर इस वसुन्धरा को शोभित करते हुए संसार-सागर में निमज्ज जनता को देशना के द्वारा उस सागर से उत्तीर्ण कराने वाले वर्तमान में विद्यमान हैं। सदा आत्मरस में लीन रहने वाले साहसमय जागरूप कौतूहलिक अन्वेषक एवं साधक भी वर्तमान हैं।

जैन धर्म विश्व के संपूर्ण धर्मों में अग्रगण्य है। इस धर्म के उपदेशक आचार्य दार्शनिक, तत्त्वचिन्तक, अपूर्व त्यागनिष्ठ चारित्र के उन्नायक होने के कारण संसार में आदर्श ख्याति प्राप्त किये हैं। इस धर्म का आधार आध्यात्मिक साधना, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह आदि है। निर्ग्रन्थ आचार्य ही वर्तमान में धर्म के संरक्षक हैं। वे अपने आत्मोद्धार के कार्य में संलग्न होने पर भी परहित के कार्य में निरन्तर प्रयत्नशील होते हैं। वे अलौकिक मुक्ति-पथ को दर्शाते हैं। प्राणिमात्र के लिए मौलिक वस्तु को प्रदान करने वाले हैं।

तीर्थंकरों का गर्भ, जन्म, दीक्षा, ज्ञान और मोक्ष आदि पांचों कल्याण उत्तर भारत में ही हुए हैं परन्तु उन तीर्थंकरों की वाणी को शास्त्रबद्ध करके वर्तमान जनता को प्रदान करने वाले आचार्यों का जन्म प्रायः दक्षिण भारत में ही हुआ है। अतः प्राचीन काल से ही उत्तर और दक्षिण का अपूर्व संगम है। भारत के गरिमामय इतिहास में दक्षिण पथ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उत्तर और दक्षिण के खान-पान, पहनावे एवं भाषा में वैविध्य होने पर भी विविधा में एकता है। भारतीय संस्कृति की दृष्टि से यह विविधता व विभिन्नता भारतवर्ष का बाह्य रूप है परन्तु धर्म की दृष्टि से विसमता का रूप नहीं है। धर्म की दृष्टि से निहित इस सांस्कृतिक एकता के रूप का परिचय प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। यह जानना भी आवश्यक है कि इस जैन संस्कृति के निर्माण में किस प्रदेश का क्या विशिष्ट योगदान रहा है। विभिन्न भाषाओं के साहित्य का अध्ययन इस कार्य में अत्यन्त सहायक होगा।

तमिल साहित्य भारत के अन्यान्य साहित्यों से विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। धर्म, साहित्य, राजनीति, कला, आदि क्षेत्रों में तमिल प्रदेश के निवासी प्राचीन काल से ही अग्रगामी रहे हैं। जैन आचार्यों ने तमिल भाषा के उच्चकोटि के साहित्य की रचना करके प्रबुद्ध समाज के लिए महान् उपकार किया है। धर्म, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, संगीत, आयुर्वेद आदि विषयों के ग्रन्थों की रचना करके तमिल भाषा को प्रज्वलित करने वाले जैन आचार्य ही थे। उनके लिखे ग्रन्थों में अलौकिक मुक्ति को देने वाला विषय भी है और प्राणिमात्र के लिए ऐहिक सुख को पहुंचाने वाली सामग्री भी।

किसी भी प्रदेश के इतिहास व धर्म के अस्तित्व को ज्ञात करने के लिए उस प्रदेश के साहित्य, अभिलेख और आचार्यों की आदर्श सेवा ही प्रमाणभूत होते हैं। अब हमें यह विचार करना है कि तमिलनाडु में जैन धर्म का अस्तित्व कब से रहा, तमिल साहित्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काश में कौन-कौन आचार्य प्रकाशमान रहे इत्यादि। तमिलनाडु में ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी से ही जैन धर्म के अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। तमिलनाडु से निकटस्थ देश लंका के इतिहास से तमिलनाडु में जैन धर्म का काल ज्ञात होता है।

लंका में जैन धर्म

श्रीलंका एक लघुतर द्वीप भूमि है जो तमिलनाडु से अति निकटस्थ है। उसके चारों ओर हिन्दमहासागर वेष्टित है। वहां पर ई० पू० चौथी शताब्दी से ही जैन धर्म का अस्तित्व था। इसके लिए उस देश का इतिहास ही साक्षी है। महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थ लंका के इतिहास को बताने वाला एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह ई० पू० पांचवीं शताब्दी में ही तमिलनाडु में जैन धर्म का अस्तित्व होने का आधार देता है। लंका के राजा पाण्डुकाभय का शासन काल ई० पू० ३७७-३०७ था। उसकी राजधानी अनुराधपुरम थी। उस नगर में जैन निग्रंथ साधुओं के लिए पृथक् रूप में वासस्थान एवं मंदिर उन्होंने बनवाये। निर्ग्रन्थ पर्वत नामक स्थान पर उन्होंने निर्ग्रन्थ साधुओं के लिए विशेष रूप से आवास स्थान बनवाया था। कालांतर में उस स्थान का नाम पाण्डुकाभय भी पड़ गया। महावंश ग्रन्थ में जैन धर्म का निगण्डुमत आजीवक मता नाम होने की बातें मिलती हैं।[1] अनुराधपुरम के निकटस्थ अभयगिरि पर्वत पर दो मूर्तियां अंकित हैं, उनमें एक भगवान् बाहुबलि की है और दूसरी तीर्थंकर की। ये मूर्तियाँ महावंश ग्रन्थ में बतायी गयी बातों की पुष्टि करती हैं, अतः ई० पू० पांचवीं शताब्दी में लंका में जैन धर्म के अस्तित्व भी सिद्ध करती हैं।

लंका में जैन धर्म तमिलनाडु से ही गया होगा। वर्तमान में वहां बौद्ध धर्म का बोलबाला है। यह धर्म भी तमिलनाडु के मार्ग से ही लंका में गया है। जैन निर्ग्रन्थ साधु जल में या यान में चलते नहीं। लंका तो हिन्दमहासागर से वेष्टित है। उत्तर भारत या कलिंग देश से सीधा लंका में जैन साधु का विहार संभव नहीं। लंका और तमिलनाडु के मध्यस्थ जल-भाग अति संकुचित है। ई० पू० इस भाग का जलस्थल सूख कर जल-रहित रहा होगा। उसी मार्ग से जैन निर्ग्रन्थ साधु लंका गये होंगे। ऐसा अन्वेषकों का अकाट्य विश्वास एवं मान्यता है। ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी में तमिलनाडु के मार्ग से लंका में जैन निर्ग्रन्थ साधु गये हैं तो उसके पूर्व ही तमिलनाडु में जैनधर्म का अस्तित्व अवश्य होना चाहिये।

कुछ लोगों की धारणा है कि आचार्य भद्रबाहु के दक्षिण में स्थित श्रवणबेलगोला में (ई० पू० तीसरी शताब्दी के) आगमन के बाद ही तमिलनाडु में जैन धर्म का प्रवेश हुआ है। उनकी यह धारणा गलत है। जैन साधुओं का आचार-विचार अति पवित्र होता है। वे सिर्फ श्रावक के हाथ से ही आहार लेते हैं। भद्रबाहु के आगमन से पूर्व तमिलनाडु में जैन धर्म के अनुयायी श्रावक न रहे हों तो आगन्तुक आचार्यों को आहारादि की व्यवस्था कौन करते। आहारादि की व्यवस्था के बिना आचार्यों का विहार कैसे होता? अतः आचार्यों का प्रवेश एवं लंका का इतिहास आदि से यह सिद्ध होता है कि ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी से ही तमिलनाडु में जैन धर्म अवश्य था।

विशाखाचार्य संघ का विहार

ई० पू० तीसरी शताब्दी में उत्तर भारत में बारह वर्ष का अकाल पड़ा था। उस समय आचार्य भद्रबाहु बारह हजार मुनियों के साथ दक्षिण भारत में स्थित श्रवणबेलगोला में आकर रहे। सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य भी अपने परिवार सहित उनके संघ में रहे। यह इतिहास सर्वसम्मत है। आचार्य भद्रबाहु ने अपने शिष्य विशाखाचार्य को आठ हजार मुनिगणों सहित तमिलनाडु में धर्म के प्रचारार्थ भेजा था। उन मुनिगणों ने तत्काल तमिलनाडु में पाण्डिय और चोल जनपद में स्थित दिगम्बर मुनियों के साथ मिलकर सर्वत्र जैन धर्म का प्रचार किया था। इन बातों को तमिलनाडु में स्थित तत्कालीन अभिलेखों से ज्ञात कर सकते हैं।

इतिहास काल कहलाने वाले रामायणकाल के पूर्व ही तमिलनाडु में जैन साधु और श्रावकों की अवस्थिति अत्यंत उन्नत दशा में थी। उस समय के शासकों के सहयोग के बिना धर्म का अस्तित्व नहीं हो सकता था। वे न्यायपूर्वक नीति के अनुकूल शासन करते थे। उनके शासन में संतों की वाणी एवं धर्म का प्रसरण होता था। सामाजिक जीवन, सभ्यता, ज्ञान, कला आदि की अभिवृद्धि हुई थी। अगर शासक दानव प्रकृति के होते तो संत वहां विद्यमान न रह पाते। तमिल भाषा में कम्बरामायण प्रामाणिक ग्रन्थ है, जो अजैन कवि कम्बन का लिखा हुआ है। उसमें उन्होंने रामचन्द्र के मुंह से ये बातें कहलायी हैं। सुग्रीव के सेना सहित लंका जाते समय रामचन्द्र ने उनको लंका का मार्ग बताते हुए कहा है कि "दक्षिणापथ की सीमा में वेंकटगिरि स्थित है। उस पर्वत पर द्रव्यगुण पर्याय के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येक अंशों को जानने वाले, संस्कृत, प्राकृत और दाक्षिणात्य भाषाविद्, सम्यक्दर्शन ज्ञानचारित्र से विभूषित दिगम्बर निर्ग्रन्थ साधुगण कर्मक्षयार्थ अहर्निश अनवरत तप और ध्यान में निष्पण्ण रहते हैं। उनको नमोस्तु करके उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर आगे चल पड़ना।" वेंकटगिरि वर्तमान तिरुपति है जो अब आंध्रप्रदेश के अन्तर्गत है। इतिहास कहता है कि तमिलनाडु की सीमा वकटगिरि से प्रारम्भ होती थी। अतः तिरुपति पहले तमिलनाडु के अन्तर्गत था। इस कथन से भी तमिलनाडु में जैन धर्म का अस्तित्व मालूम होता है।

कलिंग देश का इतिहास

कलिंग देश के नरेश कारवेल के शासनकाल में (ई० पू० १६९) मगध नरेशों ने कलिंग पर चढ़ाई की और वहां पर स्थित भगवान् आदिनाथ की विशालकाय प्रतिमा को मगध देश में ले गये। इस घटना के कुछ वर्ष पश्चात् कलिंग नरेश खारवेल पुनः मगध पर चढ़ाई करके विजय पाकर उस पावन प्रतिमा को वापस ले आया। इस महत्त्वपूर्ण विजय से प्रसन्न होकर खारवेल नरेश ने बृहद् सम्मेलन बुलाया जिसमें भारत के सभी प्रांतों के नृपगणों ने भाग लिया। तमिलनाडु से पाण्डिय जनपद के नरेश ने जो जैन धर्मावलंबी था, अपने परिवार सहित जाकर उस ऋषभदेव भगवान् की प्रतिमा की वन्दना की थी। यह समाचार कलिंग देश की हस्थिगुफा के अभिलेख से ज्ञात होता है। अतः कलिंग देश का इतिहास भी तमिलनाडु में जैन धर्म की अवस्थिति को बताता है।

अब तक प्राचीन इतिहास से तमिलनाडु में जैन धर्म के अस्तित्व के सम्बन्ध में विचार किया गया। आगे अभिलेख के सम्बन्ध में विचार करें।

ब्राह्मी अभिलेख

ब्राह्मी लिपि अति प्राचीन है। इस लिपि का उद्भव भगवान् ऋषभदेव के द्वारा हुआ था। ऋषभदेव ने ही अपनी पुत्री ब्राह्मी को यह लिपि सिखाई थी। यह लिपि प्रायः तमिल लिपि से मिलती जुलती है। इस लिपि से उत्कीर्ण अभिलेख तमिलनाडु के समस्त प्रदेशों में स्थित गिरिकन्दरा के शिलापट्टों पर पाये जाते हैं जहां निर्ग्रन्थ साधुओं का वासस्थान था। ये गिरिकन्दरायें प्राकृतिक हैं, किसी के द्वारा बनायी हुई नह। इन पर्वतों में स्वच्छ जल से भरे जलकुण्ड भी स्थित हैं। ये पर्वत जनता के वास-स्थान से किंचित् दूर अवस्थित हैं। कुछ स्थान ऐसे भी हैं जहाँ मनुष्य का पहुंचना भी अति कठिन है, तो भी वे स्थान वहां पहुंचने वालों को अपने प्राकृतिक सौन्दर्य से मन की चंचलता को दूर करके शान्ति प्रदान करते हैं। इन गुफाओं में दिगम्बर निर्ग्रन्थ साधु अपना वास-स्थान बनाकर आत्मसाधना में तत्पर होते हुए सिद्धान्त, न्याय, तर्क, व्याकरण, साहित्य आदि विषयों के उच्चकोटि के ग्रन्थों की रचना भी करते थे। उस समय के नरेशों ने निर्ग्रन्थों के लिए शिलातल पर शय्यायें बनवायीं अर्थात् गुफा के तल भाग को लचीलेदार बनाकर शय्या के उपयुक्त स्थान बनवाए। ये गिरिकन्दरायें एवं शय्यायें वर्तमान में भी मदुरै जिले के निकटस्थ पर्वतों पर विपुल मात्रा में विद्यमान हैं। इन गुफाओं का विवरण, विगत काल में स्थित साधुओं की बातें और काल आदि ब्राह्मी लिपि में लिखे मिलते हैं।

ब्राह्मी का अपर नाम तमिलि है। प्राचीन तमिललिपि ही तमिलि कहलाती है। इसको तमिल ब्राह्मी लिपि भी कहते हैं। इसका उल्लेख समवायांग सूत्र में पाया जाता है, जो ई० पू० पहली शताब्दी का है। उसमें अष्टादश प्रकार के अक्षरों के नाम हैं जिनमें ब्राह्मी, खरोष्ठी, तमिलि आदि अक्षरों का नाम भी है। भाषाविदों व अन्वेषकों का कहना है कि जब से ब्राह्मी लिपि का प्रादुर्भाव हुआ तभी से तमिलि लिपि का भी प्रादुर्भाव हुआ। इन बातों को यह ग्रन्थ साबित करता है। इन अक्षरों से अंकित अधिकतर अभिलेख मदुरै नगर के निकटस्थ आनै मलै, आन्दै मलै, समनरमलै (श्रमणगिरि) आदि पर्वतों की गुफाओं में व चट्टानों में पाये जाते हैं, जो ई० पू० तीसरी शताब्दी से पहले के हैं।

बाह्मी और तमिलि लिपि के अलावा वट्टलेत्तु लिपि भी पाई जाती है। यह न ब्राह्मी है न तमिलि है। इसकी आकृति तमिल लिपि से ही मिलती जुलती है। इसका खोजपूर्ण आधार दक्षिण भारत के अभिलेख शोध विभाग (South Indian Epigraphy) के पास है।

ब्राह्मी, तमिलि, वटेलुत्तु आदि अभिलेख जहां-जहां पाये जाते हैं उसका विवरण इस प्रकार है—

पुदुकोट्टै जिले में ६ स्थान, मदुरै जिले में १२ स्थान, तिरुनेलवेलि जिले में ७ स्थान, तिरुचिनापल्लि जिले में ३ स्थान, उत्तर आर्काट जिले में ३ स्थान, दक्षिण आर्काड जिले में ५ स्थान, चित्तूर जिले में २ स्थान (वर्तमान में चित्तूर जिला आंध्रप्रदेश में हैं)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन सभी स्थानों में स्थित अभिलेखों में तमिलनाडु के जैन इतिहास का विशद वर्णन प्राप्त है। काल को पांच श्रेणी में विभाजित किया गया है—

१. ई० पूर्व तीसरी शताब्दी व उसके पूर्व
२. ई० पूर्व दूसरी व पहली शताब्दी : प्रथम काल
३. ईस्वी पहली और दूसरी शताब्दी : मध्यम काल
४. ईस्वी तीसरी और चौथी शताब्दी : अंतिम काल
५. ईस्वी पांचवी शताब्दी के बाद का काल

स्थान और अभिलेखों की संख्या निम्न प्रकार है :—

ई० पू० पहली शताब्दी व दूसरी शताब्दी	१२ स्थान ५० अभिलेख
ईस्वी पहली व दूसरी शताब्दी	३ स्थान ५ अभिलेख
ईस्वी तीसरी व चौथी शताब्दी	५ स्थान १९ अभिलेख
ईस्वी पांचवीं व छठी शताब्दी	२ स्थान २ अभिलेख
	२२ ७६

इन बाईस स्थानों में से प्राप्त ७६ अभिलेखों में ५० अभिलेख ईस्वी पूर्व दूसरी शताब्दी के हैं। ये सभी अभिलेख जैनधर्म एवं आचार्यों से सम्बन्धित हैं। ऐतिहासिक काल के पूर्व में स्थित नरेशों के समय, उनकी गतिविधि, अभिलेख आदि की अन्वेषणपूर्ण विचार-धारा से यह पता चलता है कि तमिलनाडु में जैनधर्म का अस्तित्व ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी के पूर्व से ही था।

जैन आचार्यों की साहित्य-सेवा

जैन आचार्य केवल प्राकृत और संस्कृत भाषा के ही धनी न थे, वे जिस प्रांत म विहार करते थे उस प्रान्त की भाषा की प्रतिभा पाकर तत्रस्थित जनसमुदाय के हितार्थ धर्म और साहित्य ग्रन्थों की रचना भी किया करते थे। तमिल प्रान्त के आचार्यों के कार्य-कलाप अत्यंत अनूठे हैं। उन्होंने तमिल भाषा के उच्च कोटि के ग्रन्थों की रचना की थी। तमिल साहित्य के लिए उन्होंने जो योगदान दिया है वह महत्त्वपूर्ण है। तमिल साहित्य-रचना की प्रवृत्ति लगभग ईस्वी दूसरी शताब्दी से छठी शताब्दी तक अत्यन्त प्रबल थी।

हरिषेण रचित (ई० ९३१) वृहत् कथा कोष तथा कन्नड़ भाषा में देवनन्दि विरचित राजावलि कथे (ई० १८३८) इन ग्रन्थों से तमिल साहित्य व वांङ्मय का परिचय मिलता है। तमिल भाषा के व्याकरण ग्रन्थों में तोलकाधियम एक प्रामाणिक ग्रन्थ है जो ई० पूर्व का है। इसके रचयिता जैन आचार्य ही हैं। साहित्य के लिए ही व्याकरण लिखा जाता है, अतः साहित्य रचना काल व्याकरण के पूव का मानना चाहिये। जब तोलकाधियम व्याकरण ई० पू० का है तो साहित्य रचना काल भी ईस्वी पूर्व होना चाहिये। जब ईस्वी पांचवीं शताब्दी के पहले तमिलनाडु में जैन धर्म का अस्तित्व था उस समय से ही साहित्य का अस्तित्व होना चाहिये।

तमिल साहित्य

तमिल काव्यों को महाकाव्य व लघुकाव्य के नाम से दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है। शिलप्पडिकारम, जीवक चिन्ता-मणि (९ वीं शताब्दी), कुण्डलकेशी, तलैयापबि, मणिमेखलै ये पांचों महाकाव्य माने जाते हैं। इनमें पहले के तीन ग्रन्थ जैन आचार्यों की कृति हैं। चूलामणि, पेरुङ्कथै, यशोधर काव्य, नागकुमार काव्य, नीलकेशी ये पांचों लघुकाव्य माने जाते हैं। ये सभी काव्य जैन आचार्यों की कृति हैं। इन काव्यों के अलावा और भी अनेक ग्रन्थ हैं जिनका नाम इस प्रकार है—मेरुमन्दपुराणम, नारदचरित्र, शान्तिपुराणम इत्यादि। व्याकरण, कोष, गणित, संगीत, नाटक, ज्योतिष, नीतिशास्त्र आदि विषयों के अन्य ग्रन्थ भी हैं।

'तोलकाप्पियम' तमिल भाषा का अति प्राचीन ग्रन्थ है। यह ई० पू० तीसरी या दूसरी शताब्दी में रचित एक व्याकरणग्रन्थ है। इसके रचयिता जैन आचार्य हैं, इस बात को जैनेतर विद्वान् भी मानते हैं। इसमें तत्कालीन समाज में प्रचलित गतिविधियों का भी वर्णन पाया जाता है। यह इसकी विशेषता है कि इसमें किसी प्रकार की साम्प्रदायिक बात नहीं हैं। अहिंसा सम्बन्धी विषयों पर अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जोर दिया गया है। कर्म सिद्धान्त का जिक्र भी है। सर्वत्र वीतरागी हितोपदेशी का वर्णन अधिक मात्रा में है।

वाङ्मय के क्षेत्र में साहित्य का स्थान पहले है, उसके बाद व्याकरण का। साहित्य व काव्य के लिए व्याकरण लिखा जाता है। इसके वर्णन व लक्षण को प्रमाणित व परिमार्जित करने के लिए ही व्याकरण की रचना की जाती है। जब 'तोलकाधियम' ई० पू० तीसरी शताब्दी की मानी जाती है तो उसके पूर्व ही साहित्य व काव्य का अस्तित्व होना चाहिये : इस दृष्टि से तोलकाप्पियम के पूर्व ही जैन साहित्य के रचना-काल को मानना चाहिये। तोलकाप्पियम के अतिरिक्त नन्नूल, याधेरुंगलकारिगै, पाप्पेरुंकलै वृत्ति, नेमिनादम, वेण्बा पट्टियल आदि व्याकरण ग्रन्थ भी जैन आचार्यों की कृतियां हैं।

'तिरुक्कुरल' तमिल भाषा का एक प्राचीन नीतिग्रन्थ है। वर्तमान में भी जैनेतर जनता एवं तमिलनाडु सरकार भी इस ग्रन्थ को महत्ता देती है। इसको तमिलवेद भी कहते हैं। इसके रचयिता तिरुवल्लुवर थे। इनको जैन मानने में कुछ विद्वान् हिचकिचाते हैं। कुछ विद्वान् तटस्थ हैं। कुछ लोग सम्पूर्ण रूप से जैन आचार्य की कृति मानने को तैयार हैं। यह कुन्दकुन्द आचार्य की कृति मानी जाती है। इसका प्रमाण प्रोफेसर ए० चक्रवर्ती ने तिरुक्कुरल ग्रन्थ की प्रस्तावना में दिया है जो भारतीय ज्ञानपीठ से सन् १९४९ में प्रकाशित हुई थी। इसमें १३३० दोहे हैं। इन दोहों को धर्म, अर्थ, काम के अन्तर्गत तीन भागों में विभाजित किया गया है। कुल १३३ अध्याय हैं, प्रत्येक अध्याय में दस-दस दोहे हैं। ग्रन्थकर्ता ने इसके पहले दोहे में आदि भगवान् की स्तुति की है। तदनन्तर लगातार दस दोहों में वीतराग अरहंत, जितेन्द्रिय, कमलविहारी, सर्वज्ञ, कृतकृत्य आदि अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग करके मंगलाचरण किया है। इन बातों से यह निर्विवाद सिद्ध है कि इसके रचयिता जैन आचार्य ही हैं।

वाङ्मय के विकास और सिद्धान्त की रचना में तमिल प्रान्त के आचार्यों ने अनुपम योगदान दिया है। उन आचार्यों के नाम इस प्रकार हैं—कुन्दकुन्द, समन्तभद्र, अकलंक, जिनसेन, गुणभद्र, विद्यानन्दी, पुष्पदन्त, महावीराचार्य, नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती, मल्लिसेन, वीरनन्दि, समयदिवाकरमुनि, वादीभसिंह सूरि आदि। ये सभी प्रांतीय भाषा के विद्वान् होते हुए भी संस्कृत और प्राकृत के अकाट्य प्रतिभाशाली थे। वादीभसिंह सूरि ने अपनी कृति क्षत्रचूड़ामणि में पाण्डिय नरेश राजराजचोल का गुणगान किया है।

तमिल के प्राचीन ग्रन्थ एवं अभिलेखों में आचार्यों को अडिगल, कुरवर के नाम से तथा आर्यिकाओं को कुरन्तियर नाम से अभिव्यक्त किया गया है। तमिलनाडु की गिरिकन्दराओं से प्राप्त अभिलेखों में निम्नलिखित आचार्य और आर्यिकाओं के नाम उपलब्ध हैं : आचार्यों के नाम :— (१) अच्चनन्दि, (२) अरिष्टनेमि, (३) अष्टोपवासी, (४) भद्रबाहु, (५) चन्द्रनन्दी, (६) दयापाल, (७) धर्मदेव, (८) एलाचार्य (९) गुणकीर्ति भट्टारक, (१०) गुणसेकर, (११) गुणवीर, (१२) गुणवीर कुरवडिगल, (१३) इलयभट्टारक, (१४) इन्द्रसेन, (१५) कनकनन्दि, (१६) कनकचन्द्र, (१७) बलदेव माण्वक नन्दि कनकवीर, (१८) कुरत्ती कनकनन्दी भट्टारक, (१९) कुरत्ती तीर्थ भट्टारक, (२०) गुरु चन्द्रकीर्ति, (२१) माघनन्दि, (२२) मलैय त्तुवरसर, (२३) मल्लिसेन भट्टारक, (२४) मल्लिसेन वामनाचार्य, (२५) मतिसागर, (२६) मौनि भट्टारक, (२७) मिगै कुमन, (२८) मुनि सर्वनन्दि, (२९) आचार्य श्रीपाल, (३०) माघनन्दि भट्टारक, (३१) अरैयंगाविदि संघनम्बी (३२) नागनन्दि, (३३) नलकूट अमलनेमि भट्टारक, (३४) नाट्टिय भट्टारक, (३५) परवादि मल्लिपुष्पसेन, (३६) वामनाचार्य, (३७) पार्श्व भट्टारक, (३८) पिट्टिणि भट्टारक, (३९) गुणभद्र, (४०) पुष्पसेन वामनाचार्य, (४१) शान्तिवीर कुरकर, (४२), श्री नन्दि, (४३) श्रीमलैकुल श्रीवर्द्धमान, (४४) अच्चनन्दिअडिगल, (४५) वादिराज, (४६) वज्रनन्दि, (४७) वेलिकोंगैयर पत्तडलिगल, (४८) विशाखाचार्य, (४९) विनयभासुर कुडवाडि, (५०) तिरुक्करण्डिपादमूलतर, (५१) गुणसागर, (५२) भवनन्दि, (५३) वीरसेन, (५४) नेमिचन्द्र, (५५) अकलंक, (५६) अभयनन्दि, (५७) वीरनन्दि, (५८) इन्द्रनन्दि, (५९) गुणभद्र मामुनि, (६०) वसुदेवसिद्धान्त भट्टारक, (६१) तिरुनक्कदेवर, इत्यादि।

आर्यिकाओं के नाम :—(१) अरिष्टनेमि कुरन्तियर, (२) अव्वैयार, (३) गुणं ताङ्कुरत्तियार, (४) इलनेसुरत्तु कुरत्तियार, (५) कवुन्दअडिगल, (६) कनकवीर कुरन्ति, (७) कुंडल कुरत्तियार, (८) मम्मैकुरत्तियार, (९) मिलनूर कुरत्तियार, (१०) नलकूर कुरत्तियार, (११) अरिट्टनेमि भट्टारक स्नातक अनशन कुरत्तियार, (१२) पेरुर कुरत्तियार (१३) पिच्चैकुरत्तियार, (१४) पूर्वनन्दि कुरत्तियार, (१५) संघ कुरत्तियार (१६) तिरुविसै कुरत्तियार, (१७) श्री विजय कुरत्तियार, (१८) तिरुमलैकुरत्ति, (१९) तिरुप्परुत्तिकुरत्ति, (२०) तिरुचारणत्तु कुरत्ति, आदि।

आचार्य श्री का अनन्य अनुग्रह

अब तक तमिलनाडु के जैन आचार्य एवं आर्यिकाओं के नाम व उनकी साहित्य-सेवा आदि का उल्लेख किया गया है। तमिल भाषा में जो पंच महाकाव्यों का जिक्र हमने किया था उनमें "जीवक चिन्तामणि" तमिल साहित्याकाश में जगमगाता सूर्य किरणवत्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चकोटि का ग्रन्थ है। उसी की श्रेणी में 'मेरुमन्दर पुराणम्' ग्रन्थ है। वर्तमान जैन समाज में इस ग्रन्थ का प्रचलन अधिक हो गया है। इसमें कथावस्तु के साथ-साथ जैन सिद्धान्त की रहस्यपूर्ण बातों को तमिल जनता को उपयोगार्थ प्रदान किया गया है। इसके रचयिता 'वामनाचार्य' हैं जो तमिल प्रान्त की प्रसिद्ध नगरी 'काजीपुरम्' के त्रैलोक्यनाथ मन्दिर (महावीर स्वामी का मंदिर) में रहते थे। अब यह स्थान 'तिरूप्परुत्ति कुण्ड्रम' व 'जिनकांची' कहलाता है। अब भी वहां पर आचार्य का चरणचिह्न विद्यमान है। आचार्य देशभूषण महाराज ने इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद करके हिन्दी जगत् की जनता के सम्मुख तमिल साहित्य की महत्ता को प्रकट किया है। इस महान् ऐतिहासिक कार्य को सम्पन्न करके उन्होंने जो अनूठा कार्य किया है उसके लिए तमिलनाडु जैन समाज, तमिल भाषाविद् व साहित्यकार आचार्यश्री के चिरऋणी रहेंगे। इसमें आचार्यश्री का अनन्य अनुग्रह है कि उन्होंने उधर भारत के जैन समाज को तमिल साहित्य की महत्ता ज्ञात करने हेतु महान् कार्य किया है। आचार्यश्री प्रकाण्ड विद्वान्, महान् तपस्वी और ज्ञानी हैं। उनकी मातृभाषा कन्नड़ होते हुए भी वे संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत, के प्रतिभासम्पन्न महान् योगी हैं। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। कन्नड़ भाषा साहित्य को भी हिन्दी में अनुवाद करके प्रकाशित कराकर अविस्मरणीय कार्य किया है। उनके दिव्य चरणों में मैं बार-बार नमोस्तु करता हूं।

वर्तमान दिगम्बर जैन समाज में आप अग्रगण्य आचार्य हैं। आपने अनेकों विद्वानों को तैयार किया है। त्यागी, मुनि, आर्यिकाओं को दीक्षित कराकर अनगार धर्म को अक्षुण्ण बनाया है। आपके तत्वावधान व प्रतिबोध के कारण अनेकों दिगम्बर जैन मंदिरों का निर्माण होकर प्रतिष्ठा हुई है। आप पंचमकाल में पंचम गति का मार्ग बताने वाले पंचाननवत् भव्ययोगी महापुरुष हैं। मुनि-धर्म-विरोधी शृगालों के लिए सिंह-पुरुष हैं।

तमिल भाषा के जैन ग्रन्थों की नामावलि

(अ) **साहित्य ग्रन्थ** :—१, पेरगत्तियम, २. तोलकाप्पियम्, ३. तिरुक्कुरल, ४. सिलप्पदिकारम्, ५. जीवक चिन्तामणि, ६. हरिविरुत्तम, ७. चूलामणि, ८. पैरुङ्कथै, ९. वलयापदि, १० मेरु मन्दर पुराणं, ११. नारद चरितं, १२. शान्ति पुराणं, १३. उदयण-कुमार विजयम्, १४. नागकुमार काव्यं, १५. कलिंगत्तुप्परणि, १६. यशोधर काव्यम्, १७. रामकथा, १८. किलि विरुत्तम्, १९. एलिविरुत्तम, २० इलन्दिरैयन, २१. पुराण सागरम्, २२. अमिरद पदि, २३. मल्लिनाथ पुराणम्, २४. पिंगल चरित, २५. वामन चरित, २६. वर्धमानं।

(आ) **व्याकरणग्रन्थ** : १. नन्नूल, २. नम्बियकप्पोरुल, ३. याप्परूंगलम, ४. याप्परुंगलमकारिकै, ५. नेमिनादम, ६. अविनयम, ७. वेण्बापाट्टियल, ८. सन्दनूल, ९. इन्दिरकालियम, १०. अणिथियल, ११. वाय्प्पियल, १२. मौलिवरि, १३. कडिय नन्नियल, १४. कावर्कप्पाडिनियम, १५. सङ्गयाप्पु, १६. सेटयुलियल, १७. नक्कीरर् अडिनूल, १८. कैक्किलै सूत्तिरम, १९. नत्तत्तम, २०. तक्काणियम।

(इ) **नीति ग्रंथ** : १. नालडियार, २. पलमोलिनानूरु, ३. एलादि, ४. सिरुपंचमूलम, ५. तिणैमालै नूट्रैंबदु, ६. आचार क्कोवै, ७. अरनेरिच्चारम, ८. अरुङ्गलच्चेप्पु, ९. जीवसम्बोधनै, १०. ओवै (अगयित्तल सूडि) ११. नानमणि क्कडिगै, १२. इन्नानार्पदु, १३. इनियवै नार्पदु, १४. तिरिकडुगम, १५. नेमिनाद सदगमं।

(ई) **तर्क ग्रन्थ** : १. नीलकेशि, २. पिङ्गलकेशि, ३. अंजनकेशि, ४. तत्तुव दर्शन, ५. तत्वार्थ सूत्तकं।

(उ) **संगीत ग्रन्थ** : १. पेरुङ्कुरुगु, २, पैरुनारै, ३. सैयिट्रियम, ४, भरत सेना पदियम, ५. सयन्तम, ६. इसैत्तमिल सैय्युल कोवै, ७. इसैनुनुक्कम, ८. सिट्रिसै, ९. पैरिसै।

(ऊ) **प्रबन्धग्रन्थ** : तिरुक्कलम्बगम्, २. तिरुनूट्रन्दादि, ३. तिरुवैंबावै, ४. तिरुपामालै, ५. तिरुप्पुगल, ६. आदिनादर पिल्लैतमिल, ७. आदिनादर उला, ८. तिरुमेट्रिसैयन्दादि, ९. धर्मदेवि अन्दादि, १०. तिरुनादर कुन्ट्रत्तु पत्तुपदिगम।

(ए) **नाटक ग्रन्थ** : १. गुणनूल, २. अगत्तियम, ३. कूत्तनूल सन्दम।

(ऐ) **चित्रकलाग्रन्थ** : १. अवियनूल

(ओ) **कोष ग्रन्थ** : १. चूडामणि निघन्टु, २. दिवाकरम्, ३. पिङ्गलान्दै।

(औ) **ज्योतिष ग्रन्थ** : १. जिनेन्द्रमालै, २. उल्ल मुडैयान।

(अं) **गणित ग्रन्थ** : १. केट्टियणर सुवडि, २. कणक्कदिकारम, ३. नल्लिनक्क वायपाडु, ४. सिरुकुलि वायपाडु, ५. कीषवाय इलक्कम्, ६. पेरुक्कलवायपाडु।

उपर्युक्त सूची में अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हैं और अनेक ग्रन्थ अप्राप्य व लुप्त हैं किन्तु अन्य ग्रन्थों की व्याख्या व टीका में इन ग्रन्थों का नामोल्लेख पाया जाता है। इस विस्तृत ग्रंथ सूची से यह स्पष्ट है कि तमिलनाडु में जैन धर्म एवं साहित्य के विकास में जैनाचार्यों का विशेष सहयोग रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org